माता ज्ञानानन्दमयी के सान्निध्य में श्रीश्रीमाँ
(२)

श्रीश्रीमाँके वक्तव्य के पश्चात् आश्रम के शिष्य भक्तवृंदों ने एक सुन्दर भक्ति संगीत का अनुष्ठान परिवेशित किया। संगीत अनुष्ठान के समाप्ति पर श्रीश्रीज्ञानानन्दमयी माँ ने अपने शिष्यों के प्रति सरलतापूर्ण प्रश्न रखा,''अब हम लोग क्या करेंगे? मैं लेकिन कुछ नहीं जानती हूँ।'' तब सभी ने पुनः श्रीश्रीमाँ के मुखारबिन्द से ही कुछ सुनने की इच्छा प्रकट की, सभी के अनुरोध पर श्रीश्रीमाँ बोली –

''पर्णश्री में मैं जिस घर में रहती थी वहाँ सूर्य का प्रकाश प्रवेश नहीं करता था। कब रात्रि होती व कब दिन होता मुझे ख्याल ही नहीं पड़ता था। मेरे गुरुमहाराज बहुत कम आते थे, लेकिन साधना के समय अन्तर्मुखी भाव में देख पाती थी कि वे मेरे समक्ष ही बैठे है। साधन के विषय पर बोलते थे। एक दिन प्रातः साधना शेष कर विश्राम ले रही थी, तब मुझे उन्होंने कहा, ''मैं आ रहा हूँ, मछली के झोल के साथ भात खाऊँगा।'' मैं गंगा के इस पार रहती थी, वे गंगा के उस पार रहते थे; आने में दो से अढ़ाई घंटे का समय लग जाता था। मेरी यह संयुक्ता तब बहुत छोटी थी, उसकी तब १९-२० वर्ष की उम्र थी, उससे मैंने कहा, ''बाजार से मछली लेकर आओ बाबा आएंगे, मछली का झोल भात खाएंगे।'' यह बोलकर ही मैं पुनः सो गई थी। इस दरमियान देखा दरवाजे पर घंटी बज रही है – बाबा आ गए है। आकर ही मुझसे कहा, ''आज तुम प्राणायाम करोगी मैं देखूँगा।'' मैंने कहा, ''ठीक है।'' उन्होंने मुझे साधना देने के पश्चात् कभी नहीं कहा कि ''साधना देखूँगा।'' क्या करती हूँ, नहीं करती हूँ सभी तो वे जानते है किन्तु इस स्थूल शरीर से अपने समक्ष से कभी भी मेरी साधना उन्होंने नहीं देखी है। मैंने सोचा उन्हें भोजन करवादूँ, उसके पश्चात् देखेंगे। मैं तब एक वक्त ही खाती थी, अभी भी एक वक्त ही खाती हूँ रात्रि के समय। उन्हें भोजन खिलाकर साधना करने बैठी। मेरे कक्ष में महावतार बाबाजी महाराज का जो विग्रह था उसके समक्ष ही। प्राणायाम शुरु किया ही था, करते-करते ही सुना कि खर्राटे की आवाज आ रही है। घ-र-र, घ-र-र करके बाबा खूब खर्राटें ले रहे है। मैं अपनी आँखे खोल नहीं पा रही थी किन्तु मुझे मन ही मन खूब गुस्सा आ रहा था कि साधना देखेंगे बोलकर सो रहे हैं गुरु, तब गुरु और क्या देखेंगे? क्या कर रही हूँ? तब मेरे मन ही मन खूब क्रोध उठने लगा, साधना के समय प्रत्येक चक्र-चक्र पर जाप करना पड़ता है प्राणायाम के साथ – वह सब जाप भूल-भाल हो रहा था, विभिन्न चिन्ता तरंगे उठ रही थी एवं अभिमान भी हो रहा था कि एक दिन देखेंगे बोलकर भी साधना देखने का समय नहीं है सो रहे है। हठात् देखा बाबा का खर्राटे लेना बंद हो गया है, और आवाज भी सुनाई नहीं दे रही थी। मैं प्राणायाम कर रही हूँ, अचानक मेरे मन में हुआ आँखे खोलकर देखू तो, इतनी शान्ति हो गयी है, क्या कर रहे है? आँखे खोल कर देखा वे कमर में हाथ रखकर एक बार, मेरे सामने से घूमते हुए, फिर पीछे से घूमते हुए मुझे देख रहे है। मैंने कहा –''क्या कर रहे हैं आप?'' उन्होंने कहा, ''ना, देख रहा हूँ, बहुत अच्छा लगेगा, चलेगा।'' मैंने कहा, ''क्या चलेगा, कहाँ, क्यों चलेगा?'' – ''ना चलेगा, आसन पर बिठाना चलेगा।'' अर्थात् आसन पर ध्यानावस्था में बैठे हुए देखकर अच्छा लग रहा है और क्या, इसीलिए चलेगा। उन्होंने कहा, ''तुम तो जगत् को शिक्षा दोगी, तुम्हें तो दीक्षा देने का अधिकार दे दिया है (तब मैं दीक्षा नहीं देती थी)। तुम्हें दीक्षा देनी ही होगी, जगत् को शिक्षा देनी ही होगी।'' आज आसन पर बैठी हूँ और सोच रही हूँ – वही ''चलेगा, चलेगा'' करते-करते देख रही हूँ आज भी चल रहा है, सभी को बहुत अच्छा लगता है मुझे देखकर। आज सुदीर्घ काल से उनके कर्म को लेकर ही हूँ।''

उपस्थित भक्तवृंदों के मध्य से किसी एक व्यक्ति ने श्रीश्रीमाँ को साधना के विषय पर बोलने के लिए कहा, श्रीश्रीमाँ ने कहा, ''साधना का विषय स्वयं की अनुभूति के सापेक्ष होता है, साधना के संबंध में बोला नहीं जाता।

जिसकी जिस प्रकार की उपलब्धि होती है, निजबोध की अनुभूति जो जिस प्रकार ग्रहण करता है एक-एक समय में जिस प्रकार प्रकट होती है, उसी प्रकार ही उसे अनुशीलन करने से विभिन्न अनुभूतियों के माध्यम से होते हुए सर्वव्यापी स्तर पर जब वह पहुँचता है तब वेद, वेदान्त, उपनिषद के विषय उसकी उपलब्धि के साथ मिल जाते हैं, तब वह समझ पाता है कि वह ठीक पथ पर है। मैंने क्या कहा समझ सके हो क्या? एक सर्वव्यापी स्तर होता है उस अवस्था में प्रत्येक की एक ही अनुभूति होती है। एक ही अनुभूति के स्तर पर न पहुँचने तक प्रचेष्टा को चलाते रहना पड़ेगा।''

एक भक्त ने महावतार बाबाजी महाराज के संबंध में जानने की इच्छा प्रकट की श्रीश्रीमाँ से, तब श्रीश्रीमाँ ने कहा, ''बाबाजी महाराज की चिन्ता की तरंग ज्योति रूप में मेरे मध्य स्फूरित होती है। वे इच्छा मात्र से ही विभिन्न रूप धारण करते हुए दिखाई दिए हैं, सामयिक रूप से, किन्तु उनकी कायाकल्प जो स्थूल देह है उस देह से ज्योति विच्छुरण होती है। वे गुहा से बहुत ज्यादा निकलते नहीं है। उनकी गुहा में किसी को भी प्रवेश करने का निर्देश नहीं है। गुहा के बाहर से ही उनकी ज्योति देखी जा सकती है। ऐसा प्रतीत होता हैं मानों किसी ने अन्दर में अनेक हैलोजन बल्बों को जला कर छोड़ दिया है। स्फटिक सदृश उस आलोक का विच्छुरण होता है। मैंने उनकी असीम कृपा पायी है। उनकी आकाश पथ पर जो गति है वह अन्य महात्माओं से भिन्न है। वे प्रचण्ड गति से चलना-फिरना करते हैं। अन्य महात्मागण पक्षियों की तरह वायु की गति के अनुरूप आते हैं और वे सीधी दिशा में द्रुत गति से चलते हैं। जब वे सीधी दिशा में आगे बढ़ते है तो आस-पास ईथर की तरंगे भूकम्प की तरह काँप उठती है। उनकी गति सबसे भिन्न है। वह उनकी एक निजस्व शैली हैं, वे उसी प्रकार ही चलते हैं। फिर जब सभी के साथ मिलकर चलना-फिरना करते है, तब धीर मन्थर गति से चलते है ऐसा मैंने तीन-चार महात्माओं के साथ देखा है।

हम लोगों के ऊपर जो विराट् आकाश है, उस आकाश की तरफ कोई ध्यान नहीं देता किन्तु साधक के मध्य यदि देखने की इच्छा जाग्रत होती है, कि यह आकाश किसका प्रतीक है, वह यदि आकाश के विभिन्न रूप और प्रकार की अवस्थाओं को देखता है, तो घर के मध्य बैठकर भी अन्तराकाश और बाह्याकाश को एक ही है ऐसा समझ सकेगा। तब घर के मध्य बैठते हुए भी उसे ऐसा बोध होगा ही कि वह बाहर खुले आकाश में बैठा है। बाबाजी महाराज स्थूल देह में है, उनके साथ मानस पुत्र सुमेरुदासबाबा और कुछ उनके गुहा के निकटस्थ अन्य गुहाओं और आसनो में विराजित महात्माओं का मण्डल है, वे ही महात्मा जब भण्डारा देते हैं तब बाबाजी महाराज अपने दल-बल के साथ वहाँ जाते है। आकाश के उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम मार्ग से मैं भली-भाँति परिचित हूँ। इस आकाश में गन्धर्व वासी, परियाँ, रथ पर आसीन देव वासी गण, स्वर्गलोक वासी और महात्मागण सभी जाते है। अन्तर-चक्षु खुले रहने पर ही ये दिखते है, यह प्रत्यक्ष सत्य है और ये सभी लोग इसी ब्रह्माण्ड में अवस्थित है। ये सभी कोरी कल्पना नहीं है, ये जो हमलोग रथ अंकित करते है सिर्फ मात्र कल्पना नहीं है, रथ के मध्य बैठकर उड़ते हुए चले जा रहे हैं तथा नीचे के चल-अचल सभी को देखते हुए चले जा रहे है। मैंने स्वयं देखा है। ऊर्ध्वलोक के महात्मा आते हैं एवं अवस्थान करते है। वे लोग अपने लिए एक यान भी लाते हैं। महाप्रस्थान के जिस पथ पर पाण्डव गये थे वह पथ सत्य है परन्तु एक स्थान पर पहुँचकर वह पथ आकाश में विलीन हो गया है। मैंने ऊर्ध्वलोक के इन सभी महात्माओं को उनकी वापसी में देखा है। नीलकंठ जो पहाड़ है उस के मध्य भाग में जो बर्फ का पहाड़ दिखाई देता है, उसी बर्फ के पहाड़ से सीधे यान आकाश की ओर भेद करके एक ही बार ऊर्ध्व को चला जाता है। तब मैं समझी कि सूक्ष्मलोक, भूलोक, गंधर्वलोक, यमलोक सब अनेक लोक हैं। यमलोक का तात्पर्य भयावह कुछ नहीं। बैकुण्ठ जैसे सुसज्जित रहता है, यमलोक भी उसी प्रकार सुसज्जित रहता है। यमलोक के प्रत्येक रास्तों पर विशालकाय घंटे हैं जो स्वत: ही प्रतिध्वनित होते रहते हैं। उसी घंटाध्वनि के संग प्रणव शब्द उत्थित होता रहता है। यम से भयभीत होने की कोई आवश्यकता नहीं है, यम ज्ञानी पुरुष है। इसी प्रकार के अनेक लोक-लोकांतरों के दृश्य ठाकुरने मुझे दिखाये हैं। इसीलिए मैं सोचती हूँ कि मैं भगवान को जितना प्रेम करती हूँ, संभवत: भगवान उससे बहुत अधिक मुझसे प्रेम करते हैं। उन्होंने स्वयं ही मुझे यह सब दिखलाया हैं, मैंने कभी भी इन सबको देखने की इच्छा नहीं की। इसी हिमालय के अन्तर्गत ही कुबेर लोक,

किन्नर लोक आदि हैं। पुनः विभिन्न लोकों में यातायात करने का एक अन्य पथ है, मानस-सरोवर के पथ होकर। हमलोगों के यहाँ जैसे ऋषि-मुनि याग-यज्ञ करते हैं वैसा ऊर्ध्वलोक में भी होता है। पृथ्वी पर जो महात्मागण अवस्थान करते हैं उनके लिए ऊर्ध्वलोक से निमंत्रण आता है, वे उसमें उपस्थित भी होते हैं। मैंने उनको अपने-अपने यान से जाते देखा है। यान जाते-जाते सीधे ऊर्ध्व की ओर चला जाता है। फिर इसी पथ से आरोहण करते है और सीधे गंगा पथ का अनुसरण करते हैं। गंगा नदी के ऊपर-ऊपर गमन करते है। गंगा नदी ही उनके पथ का सूचक चिह्न है। यह अलौकिक नहीं है, उनके लौकिक आचार के मध्य ही यह आवागमन सहज भाव से चलता रहता है। यह विश्व-ब्रह्माण्ड महामाया की सृष्टि है, इस सृष्टि का जो रहस्य है और हमलोगों के आत्मसत्ता के ज्ञान का जो रहस्य है, दोनों एक ही हैं। हमलोगों के अस्तित्व के मध्य ही सृष्टि का रहस्य छुपा है। इसीलिए आत्मज्ञान होने से सृष्टि रहस्य शनैं-शनै प्रकटित होता है।''

श्रीश्रीमाँ के मुख से अकल्पनीय विश्व-ब्रह्माण्ड की कथा श्रवण करते-करते विमुग्ध स्तंभित भक्तवृंदों को प्रारंभ के कुछ क्षणों तक आभास ही नहीं हुआ कि माँ ने अपनी वक्तृता समाप्त कर दी है। श्रीश्रीमाँ के वक्तव्य के उपरांत कुछ क्षणों की निरविछिन्न नीरवता के पश्चात् सभी लोग माँ को प्रणाम करने को उद्ग्रीव हुए। प्रणाम-पर्व के समापन के पश्चात् प्रसाद-पर्व का आरंभ हुआ। हमसबों को उन्होंने आन्तरिकता-सह-अति यत्न पूर्वक भोग प्रसाद खिलाया। श्रीश्रीमाँ के लिए ऊपर की छत पर अवस्थित घर में श्रीश्रीज्ञानानन्दमयी माँ ने सुन्दर व्यवस्था की थी। प्रसाद-ग्रहण के पश्चात् श्रीश्रीज्ञानानन्दमयी माँ और उपस्थित सभी भक्तवृंदों से विदा लेकर हम लोग बढ़ चले अखण्ड महापीठ की ओर।

हिन्दी अनुवाद – मातृचरणाश्रित श्रीविमलानन्द